Music Journal
Volume 36
Page No. 85-90

***Vageeshwari** The World Classical Music e-Research Journal*
December 2022
ISSN 0975-7872

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi

No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

हिन्दुस्तानी बंदिशों में रचनाओं में स्वाति तिरूनल द्वारा मिश्रित भाषाओं के विभिन्न प्रयोग

नेहा सिंह
पीएच.डी. शोधार्थी
संगीत एवं ललित कला संकाय,
संगीत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संकेत शब्द – हिन्दुस्तानी राग, वाग्गेयकार, रचनाएँ, हिन्दी मिश्रित भाषा, उत्तर भारतीय संगीत

सार – संगीत सदा से भारतीय संस्कृति एंव कला का संगीत रहा है। संस्कषति का उद्भव एवं विकास जब–जब हुआ, संगीत पर भी उसका प्रभाव तब–तब देखा गया है। संगीत चाहे उत्तर भारतीय हो या चाहे दक्षिण भारतीय समय–समय पर विभिन्न राजाओं व वंशजों द्वारा भारतीय शास्त्रीय संगीत को खूब सम्मान प्राप्त हुआ। भाषाओं की सीमा तोड़कर राजाओं ने अपने दरबार में सभी संगीतज्ञों को आश्रय दिया तथा उनके संगीत व ज्ञान को एक सम्मान जनक स्थान अपने दरबार में दिया। यहाँ हम महाराज स्वाति तिरूनल के द्वारा हिन्दुस्तानी रागों की रचनाओं में हिन्दी मिश्रित भाषा के विषय पर चर्चा करेंगे कि किस प्रकार उन्होंने मात्र 33 वर्ष की आयु में कई भाषाओं के संगीतज्ञों के साथ हिन्दुस्तानी रागों में भी स्वयं रचित रचनाओं में हिन्दी मिश्रित भाषाओं का प्रयोग किया। दक्षिण भारत में अनेक से महान वाग्गेयकार, संगीतकार हुए मगर स्वाति तिरूनल का हिन्दी व बष्जभाषा के प्रति प्रेम ही उन्हें अन्य संगीतकारों से अलग पहचान देता था। वैसे तो उन्होंने हिन्दुस्तानी रागों में 36 रचनाओं को रचा मगर हम कुछ रचनाओं पर यहाँ चर्चा करेंगे। प्रस्तुत शोध पत्र उनके काव्यात्मक प्रयोग से सम्बन्धित है।

भारतीय संगीत में गतिशील तत्वों की प्रमुखता रही है। साथ ही कला भी अपनी चरम सीमा को छू लेने का प्रयत्न करती रही है। इसका प्रमुख कारण राजा–महाराजाओं द्वारा कलाकारों, विद्वानों तथा संगीतज्ञों को भारी प्रोत्साहन मिलना था। राजा–महाराजा स्वयं इतने कला पारखी हुआ करते थे उनकी इसी उदारता के कारण कलाएँ पनपती रही।

13वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही संगीत की दो धाराएँ दृष्टिगत होने लगी–

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi
No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

1. उत्तर भारतीय संगीत धारा
2. दक्षिण भारतीय संगीत धारा

उत्तर भारत के शाही राज्यों में हमें गुलाम वंश, खिलजी वंश, तुगलक वंश तथा लोदी वंश दिखाई देते है तथा साथ ही उसी समय में दक्षिण भारत में कुछ प्रमुख राजवंश भी दिखाई देते है जैसे–पल्लव वंश, चालुक्य वंश के कल्याणी, वातापी तथा वेंगी वंश भी दिखाई देते है।

उत्तर तथा दक्षिण भारतीय संगीत धाराओं में संगीत को इन सभी वंशजों के राजाओं–महाराजाओं द्वारा प्रोत्साहन मिला है। उदाहरणार्थ–दिल्ली का सुल्तान अल्लाउद्दीन खिलजी एक संगीत प्रेमी शासक था तथा ये कलाकारों का आदर–सम्मान करता था। इनके राज्यकाल में अमीर खुसरो नामक एक प्रसिद्ध संगीत विद्वान हुआ जिसे नई तालें तथा रागों को रचने में महारथ हासिल थी, साथ ही खुसरो ने दक्षिण के शुद्ध स्वर सप्तक की योजना कर उसे प्रचलित किया।

लोदी वंश के सुल्तान के समय तक ध्रुपद अत्यधिक प्रचार में आ गया था तथा मुगलकाल के भी कई राजाओं–महाराजाओं जैसे–बाबर, हुमायूँ, अकबर आदि के द्वारा भी संगीत का अध्यधिक प्रचार व प्रसार हमें देखने को मिलता है। इनके समय के कलाकारों व विद्वानों में स्वामी हरिदास, तानसेन, बैजू बावरा आदि नाम प्रमुख है। जिस प्रकार उत्तर भारतीय संगीत को उत्तर भारत के राज्यों तथा वंशों में सम्मानजनक स्थान मिला उसी प्रकार दक्षिण भारत के राज्यों तथा वंशों में भी कर्नाटक संगीत को प्रोत्साहन व सम्मान मिला। उदाहरणार्थ–पल्लव वंश का शासक महेन्द्र वर्मन संगीतज्ञ व कवि दोनों था। चालुक्य वंशीय राजा सोमेश्वर तृतीय ने 'मानसोल्लास' नामक संगीत एंव वाद्य विषय से संबंधित ग्रंथ की रचना की थी। यादव वंश में ग्रंथकार शारंगदेव थे जिन्होंने संगीत रत्नाकर ग्रंथ की रचना की।

दक्षिण भारत के वाग्गेयकारों तथा संगीतकारों में ऐसे–ऐसे महान नाम आते हैं जिन्होंने संगीत में अपना अलग नाम बनाया है जैसे–पुरन्दरदास, माधव विधारण्य, अहोबल तथा त्रिरत्न–त्यागराज, श्यामाशास्त्री, मुत्थुस्वामी दीक्षितार। इन प्रमुख नामों के अतिरिक्त महाराज स्वाति तिरूनल का नाम भी सम्मान से लिया जाता है।

19वीं शताब्दी में दक्षिण भारत के शासक महाराज स्वाति तिरूनल एक राजा के साथ संगीत विद्वान भी थे जिन्होंने ना केवल दक्षिण भारत के संगीत में अपना योगदान दिया अपितु उत्तर भारत संगीत में भी अपना समान योगदान दिया। ये बहुत प्रतिभाशाली राजा थे इनका स्थान दक्षिणात्य

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi
No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

के संगीत में 'त्रिमूर्ति' के समान माना गया है इन्होंने सभी कलाओं जैसे–ललित कला, संगीत, हथियार चलाना आदि विभिन्न को भली भांति सीखा तथा साथ ही विभिन्न भाषाओं को भी सीखा।

महाराज स्वाति तिरूनल का जन्म 16 अप्रैल 1813 में त्रावणकोर (केरल) में हुआ था। 16 वर्ष की आयु में ये त्रावणकोर के राजा बने किन्तु 27 दिसम्बर 1846 को महज 33 वर्ष की आयु में इनकी मृत्यु हो गई।

स्वाति तिरूनल को कई भाषाओं का ज्ञान था। ये कुल मिलाकर 16 भाषाओं में पारंगत थे जिसमें मलयालम, संस्कृत, मराठी, तेलगू, कन्नड़, बांग्ला, तमिल, उडिया, अंग्रेजी तथा हिंदी सहित 16 भाषायें सम्मिलित हैं। इन्होंने ब्रजभाषा, खड़ी बोली, दक्खिनी आदि भाषाओं के मिश्रित रूप में ही अपनी हिंदी की रचनाओं में हिंदी भाषा का प्रयोग किया। इनके पद सबसे ज्यादा केरल में तब प्रचार में आये, जब इन्होंने अपने पदों को संस्कृत भाषा में लिखा इन्होंने हिंदी गीत ऐसे सरल शैली में लिखे थे जिन्हें केरलवासी आसानी से समझ सकते थे। कहा जाता है कि इन्होंने अपने जीवन काल में 500 गीतों की रचना की थी। ये गीत कई भाषाओं में लिखे गए थे तथा अगर स्वाति तिरूनाल द्वारा रचित हिंदी रचनाओं की चर्चा करें तो उनकी संख्या 36 हैं जो ब्रजभाषा, खड़ी बोली, दक्खिनी के मिश्रित रूप हिंदी में रचित है।

ब्रजभाषा, खड़ी बोली तथा दक्खिनी भाषा

ब्रज भाषा या ब्रज का अर्थ है गतिशील। प्राचीन ग्रंथों में यह शब्द गायों के रहने के स्थान 'गोष्ठ' तथा गायों के चरने के स्थान के रूप में प्रयुक्त हुआ है। यमुना नदी के किनारे बसे मथुरा नगर के आस–पास का क्षेत्र ब्रज अथवा ब्रजमंडल कहा जाने लगा। भगवान कृष्ण के जन्म स्थान का क्षेत्र होने के कारण उस स्थान का महत्व प्राचीन ग्रंथों में मिलता है।

ब्रजभाषा क्षेत्र के अंतर्गत मथुरा, भरतपुर, ग्वालियर, आगरा, इटावा, मैनपुरी, अलीगढ़ आदि और भी कई क्षेत्र आते हैं जहाँ ब्रज भाषा व ब्रज संगीत का प्रयोग दिखाई देता है। ब्रज के संगीत की बात करें तो यहाँ धार्मिक संगीत में ब्रजभाषा का प्रयोग बड़े ही लयबद्ध रूप से किया जाता है। ब्रज संगीत के अंतर्गत संकीर्तन, समाज–गान, हवेली–संगीत और भक्ति संगीत से संबंधित भजन तथा ठुमरी जैसी सभी गान विधाएँ आ जाती है। वल्लभ सम्प्रदायों में 'कीर्तन' शब्द कृष्ण की विनय और लीलाओं से संबंधित पदों की गान पद्धति वाचक बना।

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi
No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

जैसे ब्रजभाषा का अधिकांश क्षेत्र मथुरा, आगरा, ग्वालियर के आसपास स्थान है वैसे ही खड़ी बोली का विकास क्षेत्र मेरठ, मुज़फ्फरनगर, सहारनपुर, अंबाला, पटियाला के पूर्वी भाग है। ये क्षेत्र उच्चारण व बोलने के अंदाज से थोड़े अलग हो जाते है। दक्खिनी भाषा मुलतः हिंदी का ही पूर्ण रूप है। इसका विकास 14वीं से 18वीं शती तक दक्खिन के 'बहमनी', 'कुतुबशाही' और 'आदिलशाही' आदि राज्यों के सुल्तानों के संरक्षण में हुआ था। वह मुलतः दिल्ली के आस–पास की हरियाणवी एवं खड़ी बोली थी, जिस पर ब्रजभाषा, अवधि और पंजाबी के साथ–साथ मराठी, गुजराती तथा दक्षिणी भाषायें जैसे तेतुगू, कन्नड़ आदि का भी प्रभाव पड़ा।

स्वाति तिरूनाल की रचनाओं की विशेषताएँ

महाराज स्वाति तिरूनल ने केरल की सीमा पार नहीं की थी मगर उनका ह्रदय उत्तर भारत में था। वे मन से उत्तर भारत में पहुँचे तथा केरल वासियों को अपना मार्ग स्वीकार करने का आह्वान करते हुए उन्होंने स्वयं रचित रचना गायी जो थी – विश्वेसर दर्शन कर, चल मन तुम काशी। यह भजन सिंधु भैरवी में गाया जाता है और इस भजन को संयुक्त राष्ट्र की आम सभा में गाकर सुब्बुलक्ष्मी जी ने इसे अनश्वर भी बनाया। कहा जाता है कि काशी में ही स्वाति महाराज की चिताभस्म अर्पित की गई थी।

सांगीतिक और साहित्यिक गुणों से भरपूर इनके गीत श्री कष्ण, श्री रामचंद्र, श्री परमेश्वर, देवी आदि पर आधारित है। इनके सभी गीत श्री पद्मनाम स्वामी को समर्पित है। इनके हर गीत के अंतिम चरण में पद्मनाभ यह शब्द आता है।

रागों की दृष्टि से इनकी रचनायें इन निम्नलिखित हिंदुस्तानी रागों में है – काफी, यमन कल्याण, विभास, भैरवी, पूर्वी, बिहाग, झिंझोटी, वृंदावनी सारंग, कन्हाड़ा, अड़ाणा, गौरी, चर्चरी (भैरवी), परज इत्यादि ये बंदिशें, आदिताल, चौताल, बिलंदी ताल (एकताल) में निबंद्ध है। इन रागों में इन्होंने ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी, तराना, भजन, टप्पा आदि शैलियों की रचना की। इनकी ज्यादातर रचनाओं में हिंदी, ब्रजभाषा का प्रयोग बहुत ही अच्छा प्रतीत होता है। हिंदी भाषी लोगों की आस्था जहाँ भगवान में ज्यादा दिखाई पड़ती है वहीं ब्रज भाषा के प्रयोग से इनकी रचनायें जनमानस को और ज्यादा आस्था से जोड़ देती हैं मानों जैसे स्वयं भगवान ने दर्शन दिये हो।

हिंदुस्तानी रागों की रचनाओं में ब्रज भाषा का प्रयोग

वैसे तो कई रचनायें इनकी ब्रज भाषा में लिखी गयी है, उनमें से कुछ बंदिशें निम्नलिखित है–

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi

No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

(1) पूर्वी राग में – उधो सुनिया मेरो संदेश

उधो सुनिया मेरो संदेश, चले जब से पिया परदेश।।
गोवा तष्ण नीर त्याग सब कीन्हों, ग्वाल बाल शोच कीन्हो।
जल जमुना नही भावे, घड़ी भर कुंज कुम्हलावे।।
हाथ मुरली गले माल, चले जब नंदलाल
मोहे ब्रज के नर नारी, भूले कैसे मोंको बनवारी।
जब लीनो जनम ब्रज में, हरो ताप छिन भर में।
ऐसे प्रभु को वियोग सहे, कैसे हमको छाँड़ि रहे।।

इस रचना में काफी जगह ब्रज भाषा का प्रयोग दिखाई देता है जैसे सुनियो, मेरो, किन्हों, भावे, कुम्हलावे, मोहे, मोंको, लीनो, छाँड़ि आदि शब्द ब्रज भाषा के शब्द है।

(2) राग भैरवी में – बंसी वाले ने मन मोहा।

बंसी वाले ने मन मोहा,
बोली बोले मीठी लागे, दर–दर उमंग भरावे।।
बैन बजावे तानन गावे, निसदिन गोपियाँ रिझावे।।
साँवरो रंग मोहिनी अंग, सुमिरन तन को भुलावे।।
कालिंधी के तीर ठाड़े, मोहन बाँसुरी बजावे।।
पद्मनाभ प्रभु दीनबंधु, सुर नर चरण मनावे।।

इस रचना में स्वाति महाराज द्वारा ब्रजभाषा का तो प्रयोग है ही, जैसे–लागे, भरावे, बजावे, गावे, रिझावे, साँवरो, भुलावे, मनावे इत्यादि साथ ही ध्यान देने योग्य बात यह है कि अंत के चरण में भगवान पद्मनाभ का भी बंदिश में जिक्र है जो लगभग कुछ बंदिशों को छोड़कर ज्यादातर रचनाओं में हमें देखने को मिलता है जो इनकी बंदिशों की खासियत है।

(3) राग भैरवी में – आन मिलो महबूब हमारो–त्रिताल (रेख़्ता, उर्दू)

आन मिलो महबूब हमारो।
होवूँ तेरी दासी लाला, नंद कुँवारो प्यारो
चुन चुन कलियाँ सेज बनाऊ, सेज पलगं रंग भाल तुम्हारो।।
अतर अबीर गुलाल लगाऊँ, प्रेम कटारी मोको नही मारो।
पद्मनाभ प्रभु फणि पर शायिक, बहु नही मोंको नाथ बिसारो।।

Copyright@2022 Author(s) retain the copyright of this article
Homepage : ejournal@mfa.du.ac.in
Publisher : Department of Music, Faculty of Music & Fine Arts, University of Delhi

No part of contents of this paper may be reproduced or transmitted in any form or by any means without the permission of Author

इस रचना की विशेषता यह है कि यह रचना केवल ब्रज भाषा में रचित नहीं है इसमें हमें दक्खिनी भाषा के शब्द भी प्रयोग में दिखाई पड़ते है जैसे महबूब, सेज, अबीर, गुलाल, कटारी, शायिक आदि और ब्रज भाषा के शब्द जैसे–हमारो, प्यारो, मोंको, कुँवारो, तुम्हारो, बिसारो तथा संस्कृत शब्द–पद्मनाभ भी इस रचना में प्रयोग में दिखाई देते है। कुल मिलाकर यह रचना तीन भाषाओं का मिश्रण है–ब्रजभाषा, दक्खिनी, संस्कृत।

अतः हिंदुस्तानी रागों की रचनाओं में हिन्दी मिश्रित भाषाओं का इतना सुंदर प्रयोग वह भी एक दक्षिणी शासक तथा संगीतज्ञ द्वारा, यह भारतीय सांस्कृतिक एकात्मकता का जीता जागता उदाहरण है। राजाओं में संगीतज्ञ और संगीतज्ञों में राजा ऐसे श्री स्वाति तिरूनल महाराज का योगदान सराहनीय और अभिनंदनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीलक्ष्मीनारायण गर्ग, ब्रज–संस्कृति और लोक संगीत, प्रकाशक–संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.), प्रथम संस्करण–2009, पृ.–1
2. श्वेता केसरी, कर्नाटक संगीत, कला प्रकाशन, बी.एच.यू. वाराणसी, प्रथम संस्करण–2015
3. लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या', भारतीय संगीतज्ञ–गायक, वादक एवं नष्तकों के शब्दचित्र, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ.–99
4. श्री कष्ष्ण नारायण रातंजनकर, महाराज श्री स्वाति तिरूनल के रचित हिन्दी भजन (हिन्दुस्तानी रागों में स्वरलिपि बद्ध, 1972
5. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास, मानसरोवर प्रकाशन प्रतिष्ठान, उत्तर प्रदेश
6. Prof. T.V. Manikandan, Laksana and Laksya of Carnatic Music : A Quest, Kanishka Publishers, Distributors, New Delhi, 2004